International Journal of Sanskrit Research 2015; 1(2): 08-11

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2015; 1(2): 08-11
© 2015 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 18-09-2014
Accepted: 07-10-2014

डॉ0 सुमन कुमार झा,
वरिष्–सहायकाचार्यः, साहित्यविभागः,
श्री. ला. ब. शा. रा. सं. विद्यापीठम्,
नवदेहली–16

Correspondence
डॉ0 सुमन कुमार झा,
वरिष्–सहायकाचार्यः, साहित्यविभागः,
श्री. ला. ब. शा. रा. सं. विद्यापीठम्,
नवदेहली–16

संस्कृत–शिक्षा में अनुसन्धन का वर्तमान परिदृश्य, चुनौतियॉ एवं सुझाव

डॉ0 सुमन कुमार झा

उफर्ध्वोर्ध्वमारूह्य यदर्थतत्त्वं धीः पश्यति श्रान्तिमवेदयन्ती।
पफलं तदाद्यैः परिकल्पतानां विवेकसोपानपरम्पराणाम्।।[1]

किसी भी शिक्षा–प(ति, शिक्षण–संस्थान, शोध–संस्थान एवं विश्वविद्यालयों के सर्वोत्कृष्ट–रूप या उपलब्धि का परिचायक संस्थान के अनुसंधन–कार्य को माना जाता है। अनुसंधन की गुणवत्ता, उपयोगिता तथा उत्कृष्टता ही शिक्षा–प(ति एवं शिक्षण–संस्थान की सपफलता और उत्कृष्टता का सूचक माना जाता है। शोध एवं प्रकाशन कार्य के द्वारा ही उस विषय एवं विषय–सम्ब (शिक्षा की वर्तमान में उपयोगिता तथा विस्तार की सम्भावना भी प्रदर्शित होती है। अनुसन्धन के आधर पर ही उस विषय के पाठड्क्रम में युगानुकूल परिवर्तन एवं परिष्कार किया जाता है, जिससे वह शिक्षा समाज एवं राष्ट्र के हित तथा आवश्यकता को पूर्ण करते हुए, शिक्षार्थियों के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में समर्थ होती है।

अतः किसी भी शिक्षा में अनुसंधन का वैशिष्ट्य सर्वथा स्वीकृत एवं सिद्ध है। फलतः वर्तमान संस्कृत–शिक्षा के क्षेत्रा में भी ऐसे अनुसन्धन–कार्य की आवश्यकता है जिससे संस्कृत–शिक्षा समाज के लिए, उपयोगी, प्रासर्घिक एवं रोजगारोन्मुखी बन सके।

वर्तमान उच्चतर–शिक्षा–प(ति में चिन्तकों, दार्शनिकों, विचारकों, शिक्षाविदों, समालोचकों, एवं नीति–निर्धरकों के द्वारा अनुसंधन एवं प्रकाशन कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की बात स्पष्ट रूप से स्वीकार की गई है। स्वतंत्राता प्राप्ति के बाद जितने भी शिक्षा–आयोगों की स्थापना भारत–सर्वकार के द्वारा की गयी, सभी ने उच्चतर शिक्षा के सन्दर्भ में अनुसंधन कार्य को बढावा देने, उसके प्रसार एवं प्रगति हेतु नये–नये शोध–संस्थान, अनुसंधन–केन्द्र एवं विश्वविद्यालयों की स्थापना पर सर्वाध्कि बल दिया। अनुसंधन हेतु अतिरिक्त–बजट की व्यवस्था, कनिष्ठ एवं वरिष्ठ शोधवृत्ति में गुणात्मक बढोतरी, नवीन–संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों की स्थापना इत्यादि महत्वपूर्ण निर्णय शिक्षा–आयोगों की देन है। भारत में उच्चतर शिक्षा के प्रसार एवं वर्तमान स्वरूप में इन आयोगों के द्वारा दिये गये विचारों एवं सुझावों का महत्वपूर्ण योगदान है।

विश्वविद्यालय–अनुदान–आयोग; U.G.C, के Draft Regulation- 2010 & 1oth, 11th& 12th five year plan of U.G.C के अनुसार महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, शोध–संस्थानों, प्रबन्धन–संस्थानों, रक्षा–संस्थानों, चिकित्सा–संस्थानों, औद्योगिक–संस्थानों एवं विद्यापीठों में शोध एवं प्रकाशन के कार्यो को बढावा देने, शोध्कार्य की गुणवत्ता सुनिश्चित करने, नवीन–अनुसंधन हेतु पाठड्क्रमों में परिवर्तन कर उसे अन्तर्विषयक (प्दजमत कपेबपचसपदंतल) करने तथा पाठ्यक्रमों को नवीनतम स्वरूप प्रदान करने का निर्देश दिया गया है।

अतः हमारा यह दायित्व बन जाता है कि हमारे द्वारा करायें जा रहे शोध–कार्य निर्धरित मानदण्ड के अनुरूप मौलिक प्रासघिड्क एवं स्तरीय हो । क्रियमाण अनुसंधनकार्य के द्वारा सम्बद्ध शास्त्रा तथा विद्या की अभिवृद्धि हो। हमें इस ओर भी ध्यान देना चाहिए कि विश्वविद्यालयों एवं शोध–संस्थानों में हो रहे अनुसंधन एवं प्रकाशन का कार्य **पिष्ट–पेषण** से रहित हो, साथ ही समाज एवं सम्बद्ध–विषय में एक नई दृष्टि उत्पन करने में समर्थ हो सके।

संस्कृतशिक्षा में अनुसंधन की उत्कृष्ट, सुदृढ एवं नैरन्तर्य परम्परा रही है। वैदिकसाहित्य से लेकर अर्वाचीनसंस्कृतसाहित्य पर्यन्त वह परम्परा अत्यन्त वैज्ञानिक–रीति एवं शास्त्रीय–प(ति से प्रवर्तित होती रही है। **संस्कृतशिक्षा में वैदिक काल से ही लोकोपयोगी समाजोपयोगी राष्ट्रोपयोगी एवं सम्पूर्ण विश्वोपयोगी अनुसंधन की परम्परा परिलक्षित होती है, जिसमें न केवल मानव अपितु समग्र जीव–जन्तुओं, वनस्पतियों, प्राकृतिक–संसाधनों के संरक्षण, विकास एवं कल्याण की कामना दृष्टिगत होती है। समग्र वैदिक–साहित्य मौलिकदृष्टि एवं लोकोपयोगी तत्त्वों तथा तथ्यों से भरे हुए हैं।**

वेद से लेकर आधुनिकसंस्कृतसाहित्य तक का अगाध एवं अनन्त संस्कृत–वाघ्मय, उत्कृष्ट तथा स्मृद्ध अनुसंधन का प्रतिपफल है। चतुर्वेद, संहिता, ब्राह्मणग्रन्थों, आरण्यक, उपनिषद्ग्रन्थों, षड्–वेदाधौं, स्मृतिग्रन्थों, धर्मशास्त्रीयग्रन्थों, दार्शनिकप्रस्थानों, नवीनदार्शनिकप्रस्थानों, आयुर्वेदग्रन्थों, कोशग्रन्थों, अर्थशास्त्रा, राजशास्त्रा, सामुद्रिकशास्त्रा, पौराणिक–वाघ्मय, कामशास्त्रा, विविध–कलाएँ, सौन्दर्यशास्त्रा, नाटङ्कशास्त्रा, अलधौंरशास्त्रा, काव्यशास्त्रा, लाक्षणिकग्रन्थों, नवीनकोशग्रन्थों, विशाल लौकिक–संस्कृतसाहित्य, समग्र–अर्वाचीन–संस्कृतसाहित्य, तथा अद्यावधि विविध–विधओं में रची जा रही साहित्यिक–रचनाएँ जिनकी संख्या अनन्त हैं उस सुदृढ अनुसन्धन परम्परा की ही देन है। समग्र–संस्कृतवाघ्मय की विकास–यात्रा संस्कृतशिक्षा की अनुपम अनुसन्धन–प(ति से ही प्रवर्तित हुई है। इस तरह हम देखते हैं कि संस्कृतशिक्षा में अनुसंधन का गौरवशाली इतिहास एवं स्मृद्ध परम्परा रही है।

परन्तु वर्तमान संस्कृतशिक्षा के अनुसंधन का स्वरूप एवं वर्तमान परिदृश्य अस्पष्ट प्रतीत होता है। यद्यपि संस्कृतवाघ्मय में शोधकार्य की अपार सम्भावनाएँ उपलब्ध हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम उन सम्भावनाओं का अन्वेषण करें एवं उसे वैज्ञानिक तरीके से युगानुरूप, युग की आवश्यकता के अनुरूप बनाकर वर्तमान समाज एवं जन–जीवन के उपयोग हेतु प्रस्तुत करें। सम्बद्ध शास्त्रा, विषय तथा साहित्य के सम्बर्द्धन एवं विकास में शोध्कार्य की भूमिका भी निर्धरित हो। संस्कृतशिक्षा के सशक्तिकरण हेतु संस्कृतशिक्षा के क्षेत्रा में क्रियमाण अनुसंधन–कार्य के परिदृश्य में समुचित परिवर्तन की महती आवश्यकता है।

आज के वैश्विक (ळसवइंस) एवं सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी; Information and communication technology, के युग में संस्कृत शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे शोध–कार्यों की उपयोगिता एवं प्रासधिंकता को हमें तथ्य, तर्क एवं प्रमाण के साथ उपस्थापित करना पड़ेगा। संस्कृतवाघ्मय में जनकल्याणार्थ अनन्त–ज्ञान एवं तथ्य निहित हैं जिनका उद्घाटन कर वर्तमान समाज एवं विश्व के समक्ष रखना न केवल हमारी जिम्मेदारी है अपितु हमारा परम ध्येय भी होना चाहिए। **आज भी प्राचीनसंस्कृतसाहित्य के हजारों ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं, अठारहवीं शताब्दी से लेकर स्वतंत्राता प्राप्ति तक तथा स्वतंत्राता प्राप्ति के बाद से लेकर अधुना पर्यन्त संस्कृतभाषा में विविध–विधओं, विविध–विषयों पर रचित अनेक शास्त्रीय–ग्रन्थ, अनन्त साहित्यिक–रचनाएँ अनुसन्धन की परिधि से बाहर हैं। जिनमें न जाने लोकोपयोगी ज्ञान विज्ञान के कितने तथ्य अन्तर्निहित हो।**

इस सम्बन्ध में कतिपय सुझाव निम्नलिखित रूप से हो सकते हैं–

1– अनुसंधन–कार्य हेतु चयनित विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार।

2– अनुसन्धन कार्य का विषय अन्तर्विषयक (प्दजमत कपेबपचसपदंतल)हो साथ ही सम्बद्ध शास्त्रा एवं विषय के सम्बर्द्धन, विकास तथा विस्तार में सहायक सिद्ध हो।

3– संस्कृतशिक्षा से सम्बद्ध समस्त अनुसंधन एवं प्रकाशन की सूचना किसी एक वेबसाइट या एजेन्सी पर यथाशीघ्र प्रेषित करने की समुचित व्यवस्था की जाय, तथा ऐसा करना संस्थानों के लिए अनिवार्य किया जाय।

4– अनुसंधन के विषय का सीमांकन अवश्य होना चाहिए। अन्यथा निष्कर्ष प्राप्ति की सम्भावना कम हो जाती है। अत्यन्त विस्तृत एवं शोध्कार्य की सीमा का निर्धरण नही होने से उसकी पूर्णता एवं व्यावहारिकता में सन्देह उपस्थित होने की सम्भावना बढ जाती है।

5– अनुसंधनकार्य में मूलग्रन्थों, पूर्वकृत–शोधकार्यो, शोध्पत्रिकाओं, शोधपत्रों, सहायकग्रन्थों एवं समीक्षाग्रन्थों का स्थान सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

6–शोध्कार्य में समस्या का निर्धरण एवं सम्भावित समाधन हेतु शोध प्रविधि का शास्त्रासम्मत–विधि एवं वैज्ञानिक–रीति से प्रयोग किया जाना चाहिए। इससे शास्त्रा की परम्परा एवं मर्यादा का संरक्षण होगा तथा पूर्व–परम्परा से उसका सम्बन्ध स्थापित हो सकेगा।

7– शोध–निर्देशकों के द्वारा शोधर्थी को शास्त्रासम्मत दिशा–निर्देश प्रदान किया जाना चाहिए। जिससे शोधर्थियों को समुचित शोध–निर्देशन प्राप्त हो सके।

8– प्रत्येक शास्त्रा के पारिभाषिकशब्दों का शब्दकोश निर्माण हो, ताकि शोधर्थी संस्कृतवाघ्मय में उस शास्त्रा के पारिभाषिक–शब्दों से परिचित हो सके तथा उन शब्दों के शास्त्रागत अर्थों से अवगत हो सके। **शोधर्थियों हेतु संस्कृतभाषा–संभाषण, एवं संस्कृत–लेखन में दक्षता सुनिश्चित करने हेतु प्रशिक्षण की नैरन्तर्य–व्यवस्था।**

9– विषय, संशय,पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष एवं निर्णय की प्रक्रिया का अनुसंधन में अनुपालन।

विषयो विषयश्चैव पूर्वपक्षस्तथोत्तरम्।
निर्णयश्चेति प×चाधौं शास्त्रो{ध्किरणं स्मृतम्।।

10– कृतकार्य–सर्वेक्षण एवं सम्बन्ध्ति–साहित्य–सर्वेक्षण को अनुसंधन की प्रक्रिया का अनिवार्य अंग बनाना ।

11– अनुसंधनकार्य हेतु सामग्री–संकलन, उ(रण आदि के लिए प्राथमिक साध्नों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए न कि secondary source स्रोत का । अनुसंधन की प्रक्रिया में मूलग्रन्थों के वैशिष्ट्य को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

12– शोधर्थियों के लिए सम्पूर्ण शोध–प्रविधि का पूर्वशिक्षण सुनिश्चित करना तथा उस प्रविध्ि का अनुसंधन–कार्य में सर्वथा अनुपालन।

13– स्तरीय शोधकार्यों के यथाशीघ्र प्रकाशन की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित करना।

14– प्रतिविभाग, प्रतिसंस्थान, प्रतिविश्वविद्यालय के द्वारा अपने–अपने संस्थानों में अबतक के कृत–शोधकार्यों की सूची वेबसाइट, इण्टरनेट पर उपलब्ध कराना एवं समग्र शोध–विषयों की सूची का ग्रन्थरूप में, या पत्रिका के रूप में प्रकाशन।

15– संस्कृतशिक्षा से सम्बद्ध सभी महाविद्यालयों, विद्यापीठों, शोध्संस्थानों, विश्वविद्यालयों के संस्कृतविभागों, एवं संस्कृतविश्वविद्यालयों का एक commonwebsite या सूचनातन्त्र विकसित किया जाय जहाँ इन संस्थानों से सम्बन्ध्ति समस्त सूचनाएँ, अब तक किये गये, तथा किये जा रहे अनुसंधनकार्यों का विवरण उपलब्ध हो। साथ ही संस्कृतशिक्षा से सम्बन्ध्ति सभी संस्थानों में अब तक हुए शोध्कार्यों की विवरणिका का किसी एक संस्था के द्वारा कई खण्डों में यथाशीघ्र प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया जाना चाहिए।

16– UGC के D.R.S-1, D,R.S- 2, Centar es tablishment, major, research, project, minor, research, project, Individual, project इत्यादि के अन्तर्गत प्राप्त अनुदान के सहयोग से गम्भीर, अन्तर्विषयक, संस्कृतविद्या के प्रचार एवं प्रसार में सहयोगी विषयों, लोक समाज एवं राष्ट्रहित से सम्बद्ध विषयों पर स्तरीय शोधकार्य को प्रोत्साहन देना। इसके लिए संसाधनों की समुचित व्यवस्था करना।

17– विविध्शास्त्रीय–टीकाग्रन्थों का पाठ्यक्रम में समावेश किया

जाना चाहिए, तथा टीकाओं में अन्तर्निहित शोध–सरणि के द्वारा शोधर्थियों में शोध–दृष्टि का विकास किया जाना चाहिए। वस्तुतः संस्कृत के मूलशास्त्रीयग्रन्थों पर लिखे गये अनेक शास्त्रीय–टीकाग्रन्थ संस्कृतशिक्षा के स्मद्ध एवं उत्कृष्ट अनुसंधन–प(ति का सर्वाध्कि सुन्दर निदर्शन है। इस उदाहरण के आधर पर वर्तमान समय में भी संस्कृतग्रन्थों पर टीकाग्रन्थों का निर्माण संस्कृतविद्या की श्रीवृद्धि में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होंगे। विशेषतः अर्वाचीन संस्कृतसाहित्य के क्षेत्रा में महत्वपूर्ण साहित्यिक–रचनाओं के उपर टीकाओं का निर्माण वर्तमान संस्कृतशिक्षा की अनिवार्य आवश्यकता है। इस कार्य को अनुसंधन कार्य के द्वारा किया जा सकता है। पाठ्यक्रम में भी कतिपय ऐसे ग्रन्थ निर्धरित हैं जिनके संस्कृतटीका की महती आवश्यकता है, विशेषतः अर्वाचीन साहित्य एवं साहित्यशास्त्र के ग्रन्थों की। शिक्षाशास्त्र में भी शास्त्रशिक्षण पर प्रामाणिक पुस्तकों की कमी प्रतीत होती है।

18– **संस्कृतशिक्षा के क्षेत्रा में अनुसंधन कार्य को बढावा देने हेतु सभी शोधर्थियों के लिए विशिष्टाचार्य तथा विद्यावारिधि स्तर पर न्यूनतम 10,000 प्रतिमाह की राशि शोधवृत्ति के रूप में, तथा वार्षिक विविध–व्यय हेतु 20,000 की राशि देने की व्यवस्था की जानी चाहिए, जो कि वर्तमान में 5,000– प्रतिमाह है। साथ ही प्रति संस्थान सभी शोधर्थियों के लिए पृथक छात्रावास का निर्माण किया जाना चाहिए। इसके लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, मानवसंसाधनविकास मन्त्रालय, तथा अन्य संगठनों को प्रतिवेदन संस्थानों के द्वारा दिया जाना चाहिए।**

19– अन्तर्विषयक (प्दजमत कपेबपचसपदंतल) शोध को प्रोत्साहित करने हेतु तत्तद् विषयों एवं शास्त्रों में संगोष्ठी, कार्यशाला, सेमिनार, परिचिर्चा, शास्त्रार्थ, एवं विशिष्टव्याख्यानमाला इत्यादि अनुसंधनपरक–आयोजनों को बढावा दिया जाना चाहिए, प्रतिशास्त्र एवं प्रतिविषय के पाठ्यक्रमों में यथासंभव कतिपय पत्रों के अन्तर्गत शास्त्रान्तर तथा समान–प्रकृतिवाले विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए। जिससे स्नातकोत्तर स्तर पर अध्ययन करने वाले छात्रों में शोध की दृष्टि विकसित होगी।

तुलनात्मकसाहित्य एवं शास्त्राों के परस्पर अन्तः सम्बन्धके अध्ययन से शोध के नये मार्ग उद्घाटित होंगे। अध्यापकों के समक्ष भी अनुसंधन के नयें नयें आयाम उद्घाटित होंगे। आचार्य स्तर की कक्षाओं से ही आचार्यो के द्वारा शोधत्मक अध्यापनपद्धति को अपनाया जाना चाहिए जिससे छात्रों में शोध–दृष्टि का विकास हो सके और छात्र शोधकार्य की ओर उन्मुख हो सके।

20– उत्कृष्ट शोधर्थियों को वृत्ति हेतु अपने अपने संस्थानों में वरीयता दिया जाना चाहिए जिससे की शोधर्थियों को प्रोत्साहन मिलें और वे अधिकतम श्रम एवं उत्साह से अनुसंधनकार्य में प्रवृत्त हो।

वर्तमान में संस्कृतशिक्षा की दो धराएँ प्रचलित हैं यथा परम्परागत–धरा एवं आधुनिक–धरा (उवकमतदेजतमंउ ज्तंकपजपवदंसेजतमंउ)। संस्कृत के परम्परागत विद्यालयों, महाविद्यालयों, विद्यापीठों, शोध्संस्थानों, संस्कृतविश्वविद्यालयों अन्य संस्कृत–संस्थानों में परम्परागत शास्त्रीय–प(ति से पठन पाठन एवं अनुसंधन कार्य प्रवर्तित होता है। वहीं सामान्य विद्यालयों, महाविद्यालयों, संस्थानों विद्यापीठों एवं विश्वविद्यालयों के संस्कृतविभागों में आधुनिक–धरा के अन्तर्गत आधुनिक–प(ति से पठन–पाठन एवं अनुसंधन–कार्य सम्पन्न होते हैं। परम्परागत धरा के अन्तर्गत जहाँ शिक्षण, मूल्याघङ्कन एवं शोध की भाषा संस्कृत है वही आधुनिक धरा के अन्तर्गत हिन्दी अंग्रेजी या क्षेत्रीय भाषाओं के द्वारा शिक्षण एवं शोधकार्य सम्पन्न किये जाते हैं। साथ ही दोनों **धराओं के पाठ्यक्रमों में भी अत्यध्कि भिन्नता पायी जाती है।** पाठ्यक्रम में एकरूपता नही होने की वजह से आधुनिक धरा के शोधर्थियों को परम्परागत धरा में कठिनाई प्रतीत होती है। ठीक यही स्थिति अध्यापन के स्तर पर भी दिखाई देती है।

अतः संस्कृतशिक्षा के सशक्तिकरण हेतु विशेष रूप से अनुसंधान के क्षेत्र में उत्कृष्टता हेतु परंपरागत–धरा के शिक्षणसंस्थानों में शास्त्रीयपद्धति से परम्परागत धरा से शिक्षित एवं दीक्षित, तथा शास्त्रों में प्रविष्ट गति वाले व्युत्पन्न शोधर्थियों को अध्यापनकार्य हेतु वरीयता दिया जाना चाहिए। जैसा कि आधुनिक धरा के शिक्षण संस्थानों में अनिवार्य रूप से देखा जाता है।

चुनौतियाँ– संस्कृतशिक्षा के अन्तर्गत किये जा रहे अनुसंधनकार्यो की निम्नलिखित चुनौतियाँ हैं– 1 अनुसंधन को मौलिक नवीन एवं वैज्ञानिक रूप प्रदान करना– संस्कृतेतर जगत के द्वारा यह आरोप हमारे उपर लगाये जाते है कि इस क्षेत्र में किये जा रहे अनुसंधनकार्यों में नवीनता मौलिकता एवं वैज्ञानिकता का अभाव पाया जाता है। प्रायशः अध्कांश शोधकार्य पिष्ट–पेषण प्रतीत होते हैं अतः हमारा दायित्व है कि इस मानदण्ड पर हम खरे उतरे । 2– संस्कृतशिक्षा में क्रियमाण शोधकार्य को लोकोपयोगी समाजोपयोगी राष्ट्रोपयोगी सम्बद्ध विषयोपयोगी एवं सम्बन्ध्ति क्षेत्र में प्रासर्धिंक बनाना । सम्बद्ध शास्त्र एवं विषय के विकास एवं सम्बर्द्धन में उस शोध कार्य की प्रासर्धिंकता तय करना। इस दिशा में हमारा प्रयत्न होना चाहिए। 3– अनुसंधन कार्य की उच्च गुणवत्ता का निर्धरण करना । 4– शोधर्थियों के लिए वृत्ति की व्यवस्था। 5– शोध–प्रबन्धें का संरक्षण तथा पुस्तक के रूप में प्रकाशन । 6– सुयोग्य शोधर्थियों का चयन । 7– संस्कृत शिक्षा के प्रति समाज एवं छात्रों का उन्मुखीकरण । 8– शोध्–कार्य हेतु आधुनिक सुविधओं की व्यवस्था, यथा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की सुविध उपलब्ध कराना । 9– शोध्कार्य एवं शोध–प्रबन्ध के गम्भीर तथा न्यायोचित मूल्याघङ्कन–प(ति का निर्माण एवं क्रियान्वयन। इस दिशा में प्रयत्न की आवश्यकता। 10– कृतकार्य सर्वेक्षण की समुचित व्यवस्था करना। 11– संस्कृतशिक्षा को रोजगारोन्मुखी बनाना, संघ एवं राज्यसेवा आयोगों की परीक्षाओं में निर्धरित–पाठ्यक्रमों का विद्यापीठों एवं विश्वविद्यालयों के आचार्यविषयों में समावेश करना । 12– संस्कृत अध्येताओं कों इस दिशा में प्रेरित करना तथा इस हेतु विशेष दिशा निर्देश एवं परामर्शकेन्द्र की स्थापना करना । 13– संस्कृतशोधर्थियों को रोजगार के समस्त क्षेत्राों की जानकारी प्रदान करना तथा । UGC एवं अन्य सर्वकारीय ंहमदबल केबीमंउम के बारे में बताना। 14– संस्कृतशोधर्थियों के लिए संगणक–प्रशिक्षण, सूचना–प्रौद्योगिकी का प्रशिक्षण, अंग्रेजीभाषादक्षता का प्रशिक्षण प्रदान करना । 15– आधुनिकज्ञान–विज्ञान एवं वैश्विकसन्दर्भ के लिए तैयार करना । 16–सभी संस्कृत–छात्राों विशेषरूप से शोधर्थियों हेतु संस्कृत–संभाषण–कौशल का विकास।

अतः वर्तमान संस्कृतशिक्षा के सशक्तिकरण हेतु आवश्यकता है उन अनगिनत ग्रन्थों में अन्तर्निहित रहस्यों, मानवजीवनोपयोगी तत्वों , तथ्यों, समाज एवं राष्ट्रोपयोगी ज्ञानों, विचारों, उपायों, तरीकों, एवं संदेशों को अनुसंधन के द्वारा समाज एवं जनजीवन के समक्ष लाना तथा अनुसंधन के निष्कर्षो से समाज एवं राष्ट्र के समक्ष विद्यमान एवं सम्भावित चुनौतियों, समस्याओं, रोगों एवं कुविचारों का निवारण किया जा सके।

संस्कृतभाषा का साहित्य सदैव मानव, समाज एवं राष्ट्र का पथप्रदर्शक रहा है, मार्गदर्शन करता रहा है, साथ ही उस शुभ एवं जनकल्याण के पथ में आनेवाली बाधाओं, अवरोधें एवं समस्याओं का व्यावहारिक तथा तार्किक समाधन भी संस्कृतवाघ्मय प्रदान करता रहा है। आज भी संस्कृतवाघ्मय में अनेकानेक बहुमूल्य विचार, अमूल्य तथ्य, विशिष्ट एवं लोकोपयोगी ज्ञान, विज्ञान भरे पड़े है जिनका सम्पूर्ण विश्व को जरूरत है। विज्ञान हो या अभियान्त्रिकी, प्रबन्धन हो या पर्यावरण, समाजशास्त्र हो या राजशास्त्र, गणितशास्त्र हो या अर्थशास्त्र, चिकित्साविज्ञान हो या योगविज्ञान, प्रबन्धन हो या मानवविज्ञान, व्यवहारज्ञान हो या मूल्यपरकज्ञान, मानवधर्म हो या राष्टधर्म, भूगर्भविज्ञान हो या नक्षत्रविज्ञान , भूगोल हो या जीवनविज्ञान, व्यक्तित्वनिर्माण हो या राष्टनिर्माण, या चरित्रनिर्माण,

व्यवसायिकशिक्षा हो या तकनीकीशिक्षा सभी विषय संस्कृतवाघ्मय में प्रचुर रूप से वर्णित हैं विवेचित हैं। आवश्यकता है उसे शोधकार्य के द्वारा सरल एवं सहज भाषा में जनसामान्य के समक्ष लोककल्याणहेतु लाने की और उसे बताने की। इसके दो महत्वपूर्ण लाभ हैं एक तो संस्कृतवाघ्मय का पुनः नवीनीकरण होगा तथा दूसरा लोगों में संस्कृत के प्रति सहज आकर्षण पैदा होगा। फलतः वर्तमान समाज संस्कृतशिक्षा के प्रति उन्मुख होगा। इति।